© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

वल्लभसम्प्रदाय में राधा–तत्त्व : एक दृष्टि

प्रभात कुमार

शोधच्छात्र,
संस्कृत विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

'सम्प्रदाय' शब्द से तात्पर्य प्रथा, रीति या किसी परम्परा से चला आया हुआ सिद्धान्त से है। भारत बहु सम्प्रदाय सम्पन्न राष्ट्र है जैसे– निम्बार्क, चैतन्य, बल्लभ, राधावल्लभ, ललित इत्यादि। इन सब में आचार्यों ने अपने–अपने सम्प्रदाय को ही महत्त्व दिया। प्रत्येक सम्प्रदाय श्रीराधा को अपनी दृष्टि से प्रस्तुत करने का सफलतम् प्रयास किया है।

बल्लभसम्प्रदाय के प्रवर्तक श्री वल्लभाचार्य (1478–1530) सोमयाजी कुल के तैलंग ब्राह्मण श्रीलक्ष्मण भट्ट के पुत्र थे। इस सम्प्रदाय का प्रमुख सिद्धान्त शुद्धाद्वैत या पुष्टिमार्ग के नाम प्रसिद्ध है। आचार्यवल्लभाचार्य अपने जीवन का अधिकांश समय काशी, अरैल तथा वृन्दावन में व्यतीत किया था। उन्होंने ब्रह्मसूत्र पर अणुभाष्यलिखकर शुद्धाद्वैत सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। उनके कुल 16 ग्रन्थों में तत्त्वदीपनिबन्ध में भागवत सिद्धान्त का प्रतिपादन है।[प] उनके द्वितीय पुत्र विट्ठलनाथ दीक्षित जिनके विद्वनमण्डल, रत्नविवरण, भक्तिहंस आदि टीकायें उपलब्ध होती है। विट्ठलनाथ के आठों पुत्रों ने अलग–अलग मठों की स्थापना कर पुष्टिमार्ग का प्रचार–प्रसार किया था। इनके अतिरिक्त बालकृष्ण भट्ट उपनाम के लालूभट्ट दीक्षित ने प्रमेयरत्नार्णव, शुद्धाद्वैतमार्तण्डप्रकाश, सेवाकौमुदी आदि ग्रन्थों का प्रणयन कर अत्यन्त आदरणीय हुए। इस सम्प्रदाय के प्रमुख सिद्धान्त इस प्रकार है

(1) शुद्धाद्वैत सिद्धान्त

शुद्धाद्वैत सिद्धान्त के नाम से प्रसिद्ध वल्लभ सम्प्रदाय के आचार्यों ने शुद्धाद्वैत शब्द का विग्रह दो प्रकार से करते है। षष्ठीतत्पुरुष तथा कर्मधारय समास से, जिसमें प्रथम षष्ठीतत्पुरुष समास के अनुसार– शुद्धयोः अद्वैतम् अर्थात् शुद्ध जगत् एवं जीव का ब्रह्म से अद्वैत। जगत् और जीव शुद्ध ब्रह्म के ही रूप है और ब्रह्म से अभिन्न है। कर्मधारय के अनुसार शुद्धं च तत् अद्वैतम् अर्थात् शुद्ध ब्रह्म ही अद्वैत तत्त्व है।[पप] यहाँ शुद्ध का तात्पर्य मायासम्बन्धरहित[पपप] तथा अद्वैत का अर्थ है– सजातीय, विजातीय तथा स्वगत में द्वैतवर्जित।[पअ] शास्त्रों में श्रीराधा जी के पृथक् सत्ता का वर्णन लीला के आलम्बन पर हुआ है। वस्तुतः राधा–कृष्ण दोनों में पूर्ण अद्वैत

की भावना सर्वथा विद्योतित दिखता है। जिस तरह धर्म और धर्मी को पृथक् नहीं किया जा सकता, वहीं स्थिति इनकी भी है। इन्हें एक–दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। जहाँ कृष्ण की सत्ता है, वहीं श्रीराधा भी विद्यमान है।[अ]

शांकरवेदान्तानुसार ब्रह्म मायाकलुषित न होकर शुद्ध है। ब्रह्म के सजातीय जीव, विजातीय जड़ पदार्थ तथा स्वगत अन्तर्यामी वस्तुतः ब्रह्मरूप ही है। अतः इस त्रिविध भेद या द्वैत से रहित अद्वैत तत्त्व ही है।

(ii) मुक्ति का साधन पुष्टि या भक्तिमार्ग–

आचार्य वल्लभ का भक्तिमार्ग ही पुष्टिमार्ग के नाम से जाना जाता है। वे पुष्टि शब्द का अर्थ पोषण या पालने–पोषने अर्थ के लिए करते है जो भगवान् की कृपा पर निर्भर होती है। यह पुष्टि शब्द भागवतपुराण के पोषण शब्द से लिया गया जो आचार्य के मत का समर्थन करता है

पोषणं तदनुग्रहः।[अप] यह पुष्टिमार्ग, मर्यादा या प्रमाणमार्ग से पृथक् है। आचार्य वल्लभ जी कहते है कि कर्मसाध्य ज्ञान भक्तिरूप साधनशास्त्र से जाना जाता है। ज्ञान तथा भक्ति से लब्ध मुक्ति मर्यादा भक्ति कही जाती है। यथा–कृतिसाध्यं साधनं ज्ञानभक्तिरूपं शास्त्रेण बोध्यते, ताभ्यां विद्वितााभ्यां मुक्तिः मर्यादा। तद्रिहितानमपि स्वरूपबलेन स्वप्रापणं पुष्टिः[अपप] और उस शास्त्रिय ज्ञान तथा भक्ति से रहित केवल ब्रह्म के आधार पर ब्रह्म को प्राप्त करना पुष्टि है। साधन सापेक्ष मोक्ष की इच्छा मर्यादा है, विहित साधन के बिना मोक्षेच्छा पुष्टि है–

साधनक्रमेण मोक्षनेच्छा हि मर्यादामार्गीया मर्यादा
विहितसाधनविनैव मोक्षनेच्छा पुष्टिमार्गमर्यादा।।[अपपप]

हरिराय जी कहते है कि भगवान् की कृपा से ही पुष्टिमार्ग में लौकिक एवं वैदिक फलागम होते है। अतः इसमें कोई विघ्न नहीं है–

अनुग्रहेणैवः सिद्धिः लौकिकी यत्र यत्रवैदिकी।
न यत्नादन्याय विघ्नः पुष्टिमार्गः स कल्पते।।[पग]

अतः स्पष्ट है कि भक्ति भी दो प्रकार की है– मर्यादा तथा पुष्टि। जिसमें प्रथम मर्यादा भक्ति से पुरुषार्थ चतुष्टय (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) की प्राप्ति होती है और वहाँ फलाकांक्षा बनी रहती है तथा पुष्टिभक्ति में फलाकांक्षा समाप्त हो जाती है। यह पुष्टि भी सामान्य और विशिष्ट दो प्रकार की होती है, जहाँ सभी प्रकार के फल प्राप्त होते है वह सामान्य तथा जो भक्ति भगवद् भक्ति को प्राप्त कराये वह विशिष्ट पुष्टि है। अतः विशिष्ट पुष्टि के अनुसार भक्ति मोक्षादि फलों से श्रेष्ठ है जिसे पंचम पुरुषार्थ कहा जाता है।[ग]

इस प्रकार दोनों भक्ति भगवद् कृपा पर अवलम्वित है। भगवान् की विशिष्ट कृपा से उद्भूत पुष्टिभक्ति भी चार प्रकार की बतायी गयी है–

(1) प्रवाह–पुष्टिभक्ति– आचार्य प्रवाहपुष्टिभक्ति के विषय में बताते हुए कहते हैं कि यह भक्ति अहंकार तथा ममता की सन्तान है। इस भक्ति के कार्यों में कर्म सदा रुचि रखती है। इस भक्ति के माध्यम से भक्त भगवदोपयोगी कर्म में प्रवृत्त होता है।

(2) मर्यादा–पुष्टिभक्ति– इस भक्ति के माध्यम से जीव की रागमूलक विषय प्रवृत्ति हटती है और वह निवृत्तिमार्गानुयायी हो जाता है, तथा उसकी रुचि भगवत्कथा श्रवण आदि में लग जाती है।

(3) पुष्टि–पुष्टिभक्ति– आचार्य के इस भक्ति से भक्त ईश्वर का विशेष कृपापात्र हो जाता है, जिससे वह सर्वज्ञ हो जाता है। अतः यह भक्ति सर्वज्ञतामूलक भक्ति है।

(4) शुद्धि–पुष्टि भक्ति– आचार्य की यह भक्ति प्रेम प्रधान भक्ति है। इस मत में यह पराभक्ति है। इसमें 'रसो वै सः' अर्थात् ब्रह्मरस का नित्य अनुभव होता है जिसकी आनन्दानुभूति श्रीराधा कृष्ण की कृपा से ही सम्भव है।

(iii) शक्तिस्वरूपा श्रीराधा का स्वकीया रूप–

आचार्य वल्लभ अपने मत के समर्थन में श्रीमद्भागवत की सुबोधिनी टीका आश्रय ले कहते है कि ''भगवान् की कोई सिद्धि, जिसे राधस् शब्द द्वारा संकेत करते है, वह सिद्धि साम्य तथा अतिशय इन दोनों भावों से विरहित है अतः उसके समान अन्यत्र कोई सिद्धि नहीं है। उसी के माध्यम से ईश्वर अपने धाम में विहार करते हैं। यह अक्षर ब्रह्म का संकेत है।[गप]

डॉ0 दीनदयाल गुप्त ने इसी सिद्धि को भगवान् की आनन्दविधायिका शक्ति स्वीकार करते हैं। ''भगवान् की रसशक्तियों के बीच का रस की सिद्धिशक्ति राधास्वामिनी रूपा है। भगवान् रस शक्तियों के बीच पूर्णरसशक्ति स्वरूपा श्रीराधा के वश में रहते हैं।''[गपप]

आचार्य वल्लभ आनन्द विधायिनी शक्तिरूपा श्रीराधा से पूर्णतया परिचित प्रतीत होते हैं। इसके समर्थन के लिए परिवृढाष्टक स्तोत्र का वे आश्रय लेते हैं। यथा–

कलिन्दोद्भूतायास्तटमनुचरन्तीं पशुपजां।
रहस्येकां दृष्टवा नवसुभावक्षोजयुगलाम्।।
दृढं नीवीग्रन्थिं श्लथयति मृगाक्ष्या दृढतरं।
रतिप्रादुर्भावोभवतु सततं श्रीपरिवृढ़े।।[गपपप]

श्रीहरिराम जी कहते है कि हमें सर्वप्रथम श्रीराधा का ही चिन्तन करना चाहिए तभी श्रीकृष्ण का साक्षात्कार सम्भव है। श्रीकृष्ण, राधा की प्राप्ति के लिए उनके नाम मत्रवत् जाप करते हैं; तथा सम्पूर्ण गुणों से सम्पन्न श्रीराधा जी के चरण धूलि बनने की कामना की है। इस प्रकार श्रीराधा जी की महत्ता अति विलक्षण है।[गपअ]

इस सम्प्रदाय के अन्तर्गत राधा–तत्त्व के सम्बन्ध में स्वकीया तथा परकीया विषयक प्रश्न की मीमांसा करने पर प्रतीत होता है कि राधा परब्रह्म की आत्मशक्ति होने के साथ ही साथ उससे सर्वदा अभिन्न है। वहाँ पर श्रीराधा को रसात्मकसिद्धि की प्रतीक माना गया है, अतः वहाँ श्रीराधा स्वकीया के रूप में ही साहित्य में वर्णित है। इस पुष्टि मार्ग में श्रीराधा के स्वकीया के विषय में तनिक में सन्देह नहीं करना चाहिए।[गअ]

(iv) बल्लभ के इष्ट का स्वरूप तथा श्रीराधा के प्रति उदात्त प्रेम का परिचय–

आचार्य वल्लभ अपने सम्प्रदाय में अपने परमाराध्य भगवान् श्रीकृष्ण के स्वरूप वर्णन करते हुए अपने ग्रन्थ मधुराष्टक में कृष्ण को मधुराधिपति कहकर इस प्रकार दर्शाते है। यथा–

अधरं मधुरं वदनं मधुरं नयनं मधुरं हसितं मधुरम्।
हृदयं मधुरं गमनं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम्।।[गअप]

अर्थात् भगवान् श्रीकृष्ण की माधुर्यगर्भित लीलाओं के प्रति उनका नैसर्गिक आग्रह स्वतः स्पष्ट हो जाता है। पुरुषोत्तम सहस्रनाम तथा श्रीकृष्णप्रेमामृतस्तोत्र में श्रीकृष्ण के रसमय अनेक नामों का उल्लेख प्राप्त होता है जो राधाकृष्ण की माधुर्यमय लीलाओं को प्रकट करती है–

.....राधा सर्वस्व सम्पुटः, राधिकारतिलम्पटः।।[गअपप]

आचार्य वल्लभ के आत्मज विट्ठल के साहित्य में भी श्रीराधा तत्त्व का विशद् उल्लेख है, जहाँ पर उनकी उपासना को पूर्णतः रसमयी बतलाया गया है। भगवती श्रीराधा के प्रति उदात्त प्रेम का परिचय इस श्लोक के माध्यम से लगाया जा सकता है। यथा–

कृपयति यदि राधा बाधिताशेषबाधा किमपरमवशिष्टं,
पुष्टिमर्यादयोर्मे, यदि वदति च किंचित स्मरेहंसो।
दितश्री–द्विक्ष्जवरमणिपंकत्या मुक्ति शुक्त्या तदादिक।।[गअपपप]

अर्थात् आचार्य जी कहते हे कि श्रीराधा की मधुर बोली के सामने सीपी भी एक तिरस्कृत वस्तु है। जिसे प्राप्त करने के साधक कभी प्रयत्न नहीं करता। अतः भक्त के लिए श्रीराधा का कृपापात्र बनना तथा श्रीराधा जी के मुखनिःसृत मधुर वचनों का श्रवण भाग्य की पराकाष्ठा है। उसके आगे वह मोक्ष को तुच्छ समझता है। भौतिक एवं आध्यात्मिक कार्यों का ठहराव ही तो श्रीराधा है। यथा–

श्रीराधे प्रियतमदृक्पातनसंजातहास–दृक्सलिलैः।
भवदीयैः स्नानं मे भूयात् सततं न पाथोभिः।।[गपग]

आचार्य इस श्लोक में पूर्ण समर्पण की भावना को दर्शाते हुए कहते है कि अन्नपानादि सभी आप पर ही अवलम्वित है। जब भूँख लगे तो आप द्वारा उगले गये पान का बीरा खा लूँ इत्यादि उनके पूर्ण समर्पण की भावना को प्रदर्शित करता है।

आचार्यजी श्रीस्वामिनीस्तोत्र के एक अन्य स्तोत्र में व्रजनन्दन श्रीकृष्ण तथा श्रीराधिका की दासी भाव से सेवा करने की कामना की है। यथा–

गेहे निकुंजं निशि संगगतायाः।
प्रियेण तल्पे विनिवेशितायाः।।
स्वकेशवृन्दैस्तव पादपंकजं,
सम्मार्जयिष्यामि मुख कदापि।।[गग]

अर्थात् श्रीराधिका चरण कमल की धूलि को अपने केश–पुंजों से झाड़ने की अभिलाषा की है।

उदात्त–प्रेम भावना– एक अन्य स्तोत्र में श्रीराधा जी के प्रति उनकी उदात्त–प्रेम भावना का दर्शन होता है। यथा–

रहस्यं श्रीराधेत्यखिलनिगमानामिव धनं,
निगूढं मद्वाणी जपतु सततं जातु न परम्।।
प्रदोषे दृङ्मोवे पुलिनगमनायातिमधुरं।
चलतस्याश्चंचत् चरणयुगमास्तां मनसि मे।।[गगप]

श्रीराधा जी का यह नाम मानो समस्त वेदों का सार–सर्वस्व तत्त्व है। आचार्यजी चूपचाप श्रीराधा मन्त्र को जपने की नशीहत देते हुए कहते है कि श्रीराधा के जिस चरण कमल की सेवा के सम्मुख उस आनन्दमयी युक्ति की भी अवहेलना करते है, जिसके लिए योगी, यति कठिन तपस्या का मार्ग अपनाते है। विट्ठलनाथ की यह उक्ति बड़ी ही मार्मिक तथा हृदयावर्णिका है–

न मे भूयान् मोक्षो न नरमराधीशसदनं।
न योगो न ज्ञानं न विषयसुखं दुःखकदनम्।।
त्वदुच्छिष्ट भोज्यं तव पदजलं पेयमसि तद।
रजो मूर्ध्नि स्वामिन्यनुसवनमस्तु प्रतिभवम्।।[गगपप]

अर्थात् मुझे मोक्ष, स्वर्ग, योग, ज्ञान तथा विषय सुख की लेशमात्र की आकांक्षा नहीं है। मेरा भोजन तो श्रीराधा का जूठा भोजन (प्रसाद), मेरा जल तो श्रीराधा का चरणामृत, हे! राधे! प्रत्येक जन्म में मैं आप की ही कामना करता हूँ।[गगपपप] इससे स्वामी जी की श्रीराधा जी के प्रति उदात्त–प्रेम का निदर्शन होता है जो स्वामी जी के पूर्ण समर्पण की भावना व्यक्त करता है।

अतः हम कह सकते है कि भगवती श्रीराधा एक साधारण सी गोपी नहीं अपितु अनन्य प्रेम की साक्षात् मूर्ति है। वह गुरु तथा मन्त्रप्रदार्त्री होने के साथ ही साथ परात्पर तत्त्व है जिसके माध्यम से ही जीव का कल्याण सम्भव है। अतः हमें उस तत्त्व का ही ध्यान करना चाहिए जो साध्या एवं आराध्या है। परमपुरुषार्थ मोक्ष को साधने

वाली श्रीराधा ही है, तथा भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा आराध्य है। इसलिए उसी तत्त्व के चिन्तन में हमें हमेशा निमग्न रहना चाहिए। आधुनिक भ्रान्त आलोचकों की श्रीराधा विषयक जो भ्रान्त भ्रान्तियाँ है (यथा श्रीराधा को प्रेयसी रूप में चित्रण करना) जो पूर्णतया निराधार है। हमें तो लगता है कि वे अपनी किसी पूर्वाग्रह की भावना से ग्रसित रहे होंगे जो अपने सुखानुभूति के लिए अपने मनोनुकूल उनका चित्रण किया। गर्गसंहिता जो कि यदुवंश के महान् आचार्य श्रीगर्ग तथा ब्रह्मवैवर्त पुराण इसके साक्षात् प्रमाण है कि भाण्डीर वन में जिस समय राधा–कृष्ण का प्रथम मिलन हुआ था उस समय कृष्ण महज 5 वर्ष के तथा श्रीराधा 25 से 30 वर्ष की वय वाली थी, जो सम्भव नहीं है। इसलिए आज के आलोचकों तथा लेखकों ने जिस तरह श्रीराधा का चित्रण किया है वह उनकी कुण्ठित बुद्धि का द्योतक है। क्योंकि ब्रह्मा जैसे यजमान जिनका विवाह सम्पन्न कराया हो उनके विषय में इस तरह नहीं सोचना चाहिए। ऐसे मूढ़ लोगों के लेखनी का भी यह तथ्य खण्डन करता है। अगर आज के लेखकों एवं आलोचकों के अनुरूप वे होते तो ब्रह्मा जैसे यजमान उनका वैदिक विधि–विधान से विवाह सम्पन्न कैसे कराते। अतः हमारे अनुसार श्रीराधा परात्पर ब्रह्म है, जिस ब्रह्म में भगवान् श्रीकृष्ण भी सर्वदा निमग्न रहते है। इसलिए प्रत्येक भक्त को स्वकल्याणार्थ भगवती श्रीराधा में मनस्थ होना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

[i] संगमलाल पाण्डेय, भारतीय दर्शन का सर्वेक्षण, पृ0 338

[ii] शुद्धद्वैतमार्तण्ड, 27

[iii] मायासम्बन्धरहितं शुद्धामित्युच्यते बुधैः।–वही, पृ0 28

[iv] तत्त्वार्थदीपः 1.66

[v] बलदेव उपाध्याय–भारतीय वाङ्मय में श्रीराधा, पृ0 79

[vi] भागवतपुराण–2.10

[vii] अणुभाष्य–3.329

[viii] वही–4.27

[ix] प्रमेयरत्नार्णव, पृ0 19

[x] संगमलाल पाण्डेय–भारतीय दर्शन का सर्वेक्षण, पृ0 341

[xi] श्रीमद्भागवतपुराण (सुबोधिनी टीका) 2/414

[xii] संस्कृतभक्ति साहित्य में श्रीराधा का स्वरूप, पृ0 135

[xiii] परिवृढाष्टक

[xiv] संस्कृत भक्ति साहित्य में श्रीराधा का स्वरूप, पृ0 138

[xv] पं0 बलदेव उपाध्याय, भारतीय वाङ्मय में श्रीराधा, पृ0 85

[xvi] आचार्य वल्लभ, मधुराष्ट्रकरसिक टीका–414

[xvii] श्रीकृष्ण प्रेमामृतस्तोत्र–श्लोक 33

[xviii] गोस्वामी विट्ठलनाथ–राधा–प्रार्थना, चतुश्लोक श्लोक

[xix] वही, श्लोक 1–4

[xx] वही, श्रीस्वामिन्पष्टक श्लोक सं0 12

[xxi] पं0 बलदेव उपाध्याय, भारतीय वाङ्मय में श्रीराधा, पृ0 82

[xxii] पं0 बलदेव उपाध्याय–भारतीय वाङ्मय में श्रीराधा, पृ0 84

[xxiii] वही